10

क्रूस पर चढ़ाया गया और जी उठा

(यूहन्ना 19 व 20)

यीशु की मृत्यु के सनातन महत्व के सामने उसके क्रूस पर चढ़ाए जाने का विवरण यूहन्ना 19:18क में बड़ा ही छोटा है: ''वहां उन्होंने उसे ... क्रूस पर चढ़ाया,'' हिन्दी में केवल छह (अंग्रेज़ी में चार) शब्दों में और यूहन्ना की मूल यूनानी भाषा में केवल तीन शब्दों में है।

यहां विशेष रूप से उसके दुख सहने के विवरण पर ज़ोर नहीं दिया गया जैसा कि आम तौर पर आज क्रूस पर चढ़ाए जाने पर प्रचार करते समय दिया जाता है। क्रूस पर अपने समय से पूर्व और उस दौरान यीशु द्वारा भोगे गए आतंक का विवरण करके पाठक की भावनाओं से खेलने की कोई कोशिश नहीं की गई। इसके दो ही कारण हैं।

पहला यह कि हमारे उलट यूहन्ना के मूल पाठक कोड़े मारे जाने और क्रूस पर दिए जाने के ढंग से परिचित हैं। जो कुछ यीशु ने सहा, वह हज़ारों दूसरे लोगों के साथ हुआ था; और यह अन्य कानून तोड़ने वालों को चेतावनी के रूप में सार्वजनिक रूप में किया गया था।

पिलातुस द्वारा यीशु की पूछताछ का विवरण यूहन्ना 18:33 से आरम्भ होता है। उस हाकिम ने तुरन्त निष्कर्ष निकाल लिया था कि यीशु रोम के लिए कोई खतरा नहीं है, बल्कि उसे उसके पास किसी धार्मिक झगड़े के कारण लाया गया था। पिलातुस ने यीशु को कोड़े मारना (19:1-5) स्पष्टतया धार्मिक अधिकारियों की खून की प्यास को इस उम्मीद से मिटाने के लिए किया गया था कि वे उसके मृत्यु दण्ड की मांग करना छोड़ दें (देखें लूका 23:16, 22)। यूहन्ना 19:4 स्पष्ट कहता है कि पिलातुस ने यीशु को उसकी अपमानजनक स्थिति में बाहर लाया ''ताकि तुम जानो कि मैं उसमें कुछ भी दोष नहीं पाता।'' फिर उसने यीशु को ''देखो, यह पुरुष!'' (आयत 5) कहते हुए उन सब के सामने लाया। यह स्पष्टतया उपहास और तिरस्कार दिखाने के लिए था कि ''इसे देखो! यही है जिससे तुम डरते हो?'' इसके बावजूद वे यीशु के लहू की मांग करते रहे, तब तक जब तक पिलातुस ने अत्यधिक निराश होकर यह कह नहीं दिया, ''तुम ही उसे लेकर क्रूस पर चढ़ाओ; क्योंकि मैं उस में दोष नहीं पाता'' (आयत 6ख)।

कोड़े मारे जाना आम तौर पर क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले होता था। इसमें क्रूस पर चढ़ाए जाने वाले व्यक्ति को धातु, हड्डी या कांच लगे टुकड़ों वाले चमड़े के कई गाठों वाले छोटे चाबुक से मारा जाता था। इसका उद्देश्य चमड़ी उधेड़ना होता था जिस कारण आमतौर पर क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले ही व्यक्ति मर जाता था। चौथी शताब्दी के इतिहासकार यूसब्युस ने लिखा है कि क्रूस पर चढ़ाए जाने वाले कुछ लोगों को इतनी बुरी तरह से कोड़े मारे जाते थे कि उनकी हड्डियां दिखाई देने लगती थीं।[1] यीशु को कोड़े मारे जाना सम्भवतया इस बात को दिखाता है कि बाद में वह अपने क्रूस पर चढ़ाने जाने के स्थान तक क्रूस को क्यों नहीं ले जा पा रहा था (मत्ती 27:32)।

क्रूस पर चढ़ाया जाना आम तौर पर सार्वजनिक स्थानों जैसे चौराहे के पास होता था जिससे आम लोगों के लिए चेतावनी का अधिक से अधिक प्रभाव हो सके। यूहन्ना ने बताया कि वह स्थान जहां यीशु को क्रूस पर चढ़ाया गया था ''नगर के निकट'' था। जिस कारण ''कई यहूदियों'' ने उस पद को पढ़ा, जिसे पिलातुस ने यीशु के सिर पर लगाया था (19:19, 20; देखें मत्ती 27:37)। यूहन्ना के समय के लोगों को मालूम था कि क्रूस पर चढ़ाए जाने का क्या अर्थ होता है, कि क्रूस पर चढ़ाए जाने वाले व्यक्ति की कलाइयों और पांवों (या कई मामलों में, एड़ियों में) में कीलें ठोंकी जाती थीं जिससे मृत्यु धीरे-धीरे आती थी, कई बार तो कई-कई दिन लग जाते थे। इसलिए विस्तार में जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी। ''वहां उन्होंने उसे क्रूस पर चढ़ाया'' (आयत 18क) कहना ही काफ़ी था।

परन्तु यीशु के दुखों के विस्तार में न जाने का एक दूसरा कारण था। यूहन्ना के लिए यीशु की मृत्यु की कहानी में ये भयानक तथ्य सबसे महत्वपूर्ण जानकारी नहीं थे। उसकी चिन्ताएं इससे भी महत्वपूर्ण थीं: (1) वह कौन था जिसे क्रूस पर चढ़ाया गया, (2) वह क्यों मरा और (3) वह मरा नहीं रहा।

क्रूस पर किसे चढ़ाया गया: यहूदियों का राजा

यूहन्ना 18:33-38 में पिलातुस ने यीशु को उसके राजा होने की बात पूछी, जो ऐसा विषय है कि उसे यहां और अध्याय 19 में दोनों जगह महत्व दिया गया है। इस संदर्भ में वास्तव में यीशु ने यह माना भी कि वह राजा है और पिलातुस को जानकारी भी दी कि उसका राजा होना ''इस संसार का नहीं'' (यूहन्ना 18:36क) यानी अस्थाई राज्य नहीं है जिसे पिलातुस को रोमी अधिकारी की चिन्ता करनी आवश्यक थी। पिलातुस ने फसह के दौरान दोनों के लिए एक अपराधी छोड़ देने की एक औपचारिक पेशकश करते हुए पूछा, ''क्या तुम चाहते हो, कि मैं तुम्हारे लिए यहूदियों के राजा को छोड़ दूं?'' (आयत 39ख)। इस पर भीड़ ने कहा, ''इसे नहीं, परन्तु हमारे लिए बरअब्बा को छोड़ दे'' (एक नाम जिसका अर्थ, विडम्बना ही है कि ''पिता का पुत्र'' है) (आयत 40)।

अध्याय 19 में आगे चलकर हम यीशु को कांटों का मुकुट, बैंजनी वस्त्र पहने और सिपाहियों के उसे ठट्ठेबाजी से सलाम करते मज़ाक उड़ाते देखते हैं (आयतें 1-3)। 12 से 16 आयतों के विवरण में राजा होने की बात फिर से यीशु के राजा होने से कैसर के राज्य के विरुद्ध बताकर की गई है। पिलातुस ने एक बार फिर कहा, ''देखो, तुम्हारा राजा!'' और ''क्या मैं तुम्हारे राजा को क्रूस पर चढ़ाऊं?'' स्पष्टतया यूहन्ना ने इनमें से प्रत्येक कथन में पिलातुस को सच्चाई को अनमने मन से मानते हुए देखा। विडम्बना का एक स्पर्श आयत 15 में भी मिलता है, जब पितालुस के प्रश्न के उत्तर में, यह कहते हुए कि ''कैसर को छोड़ हमारा और कोई राजा नहीं'' अपने वास्तविक राजा के रूप में परमेश्वर में विश्वास का यहूदियों का इनकार था। यही वह चौंकाने वाली बात है, जिसने अन्ततः पिलातुस को यीशु को क्रूस पर चढ़ाए जाने के लिए उन्हें देने को विवश कर दिया।

परन्तु इस वचन में राजा होने का विषय खत्म नहीं हुआ। जिस आरोप के कारण वह क्रूस पर चढ़ाया जा रहा होता था उसे एक तख्ती पर लिखा जाता था। पिलातुस ने उस समय की तीनों

प्रचलित भाषाओं में ''यीशु नासरी, यहूदियों का राजा'' लिख दिया,[2] ताकि हर कोई इसे पढ़ सके (आयत 19)। स्वाभाविक रूप से यहूदियों ने इसका विरोध किया पर यीशु को उसे मृत्यु दण्ड के लिए मजबूर करने के जवाब में पिलातुस ने कहा, ''मैं ने जो लिख दिया, वह लिख दिया'' (आयत 22)। उसकी कार्यवाही चाहे जैसी भी हुई पर एक बार वह फिर से यीशु को यहूदियों का राजा घोषित करके सच्चाई का गवाह बन गया।

आयत 30 में यीशु के राजा होने की बात विशेष रूप में तो नहीं बताई गई पर शाही अर्थ में इसका संकेत है, जिसमें यीशु ने ''प्राण त्याग दिए।'' सिरके का घूंट लेने के बाद (स्पष्टतया इससे वह बोल पाया), उसने कहा, ''पूरा हुआ! और सिर झुकाकर प्राण त्याग दिए।'' सुसमाचार की कोई पुस्तक यह नहीं कहती कि यीशु की ''हत्या'' हुई या उसे ''कत्ल किया गया,'' बल्कि उसने सही समय पर अपना प्राण स्वेच्छा से दे दिया।

यीशु के यह कहने का क्या अर्थ था कि ''पूरा हुआ!'' क्या पूरा हो गया था? आरम्भ से लें तो इस पृथ्वी पर उसका उद्देश्य पूरा हो गया था। साफ़-साफ़ कहें तो मसीहा/राजा के आने की अर्थात यशायाह 53 वाले दुखी सेवक की जिसने अपने लोगों को छुड़ाना था, परमेश्वर की ईश्वरीय योजना पूरी कर दी गई थी। इसके अलावा अब्राहम को दिया गया वचन कि उसके वंश के द्वारा पृथ्वी के सारे घराने आशीष पाएंगे, एक ''पुत्र'' के इस्राएल के सिंहासन पर बैठने के दाऊद को दिए वचन और नबियों के द्वारा ''आने वाले'' की प्रतिज्ञाओं का पूरा होना था जिसने उन्हें छुड़ाना था। यीशु की मृत्यु केवल एक और यहूदी किसान की या किसी बदनाम विद्रोही नेता की मृत्यु नहीं थी। यह तो मसीहा/राजा की मृत्यु थी, जो अपने लोगों को उस प्रकार से नहीं जिसकी उन्हें उम्मीद थी बल्कि उस ढंग से जिसकी योजना परमेश्वर ने संसार की नींव रखने से पहले बनाई, छुड़ाने के अपने मिशन यानी उद्देश्य को पूरा कर रहा था।

वह क्यों मरा: पापों को उठाने के लिए

यूहन्ना रचित सुसमाचार के आरम्भ के निकट जाएं तो वहां हमें यूहन्ना बपतिस्मा देने वाला यीशु को ''परमेश्वर का मेमना जो जगत के पाप उठा ले जाता है!'' (1:29) के रूप में बताते हुए पाते हैं। इस असाधारण वाक्यांश का इस्तेमाल करते हुए स्पष्टतया यूहन्ना ने परमेश्वर के अन्तिम बलिदान के मेमने के रूप में यीशु को दिखाना चाहा। वह लोगों के लिए सदा-सदा के लिए पाप बली होना था। बाद में अनजाने में प्रधान याजक ने भविष्यवाणी की, ''... तुम्हारे लिए यह भला है, कि हमारे लोगों के लिए एक मनुष्य मरे, और न यह, कि सारी जाति नाश हो'' (11:50)। यूहन्ना ने आगे कहा:

> यह बात उस ने अपनी ओर से न कही, परन्तु उस वर्ष का महायाजक होकर भविष्यवाणी की, कि यीशु उस जाति के लिए मरेगा। और न केवल उस जाति के लिए, वरन इसलिए भी, कि परमेश्वर की तितर-बितर सन्तानों को एक कर दे (11:51, 52)।

अन्य शब्दों में यीशु ने केवल यहूदी लोगों के लिए ही नहीं बल्कि इस्राएल के बाहर रहने वालों के लिए भी मरना था। यूहन्ना 12:31-33 में इस पर फिर से ज़ोर दिया गया है, जहां यीशु ने घोषणा की ''... और मैं यदि पृथ्वी पर से ऊंचे पर [क्रूस पर; आयत 32] चढ़ाया जाऊंगा, तो

सब को अपने पास खींचूंगा।''

यूहन्ना 19 और 20 में बलिदान के रूप में मेमने के रूप में यीशु का विषय बार-बार यह संकेत देते हुए आता है कि यीशु का क्रूस पर चढ़ाया जाना फसह के समय हुआ। हम पहले ही 18:39 की बात कर चुके हैं, जो कहता है कि पिलातुस ने ''फसह के दिन'' पसन्द के कैदी को छोड़ने के अधिकार का इस्तेमाल किया था। यूहन्ना विशेषकर यह कहता है कि यह ''फसह की तैयारी का दिन था'' जब यीशु को भीड़ और पिलातुस के सामने खड़ा किया गया, और कहा कि ''देखो, यही है, तुम्हारा राजा!'' (19:14)। फसह से पहले तैयारी का दिन सही था जब बलिदान के मेमनों को उस शाम फसह पर खाने के लिए काटा जाता था (निर्गमन 12:6; लूका 22:7)। आयत 31 फिर से तैयारी के दिन यहूदियों के संकोचों के सम्बन्ध में (जैसा कि आम तौर पर होता होगा), तैयारी के दिन की बात करती है, लाशों को रात भर उनके क्रूसों पर रहने देने के की बात करती है। क्योंकि उसी शाम फसह आरम्भ हो गया।

यूहन्ना नहीं चाहता था कि हम इस बात से अपरिचित रहें कि जगत के पापों को उठाने के लिए यीशु परमेश्वर के बलिदान के मेमने के रूप में पड़ा। उस कष्टदायक प्रेम की कथा में क्रूस के पास ''लाने'' की मंशा से थी जहां हमें शान्ति और अनन्त जीवन मिल सकता है।

मृत्यु के बाद क्या हुआः वह जी उठा

यूहन्ना 20 अध्याय उस तेज से भरे तथ्य की बात करता है कि अगले ''सप्ताह के पहले दिन'' (रविवार सुबह) यीशु मुर्दों में से जी उठा (आयत 1क)। उस सुबह भोर को जब मरियम मगदलीनी कब्र पर गई तो उसने देखा कि कब्र के मुंह पर रखा पत्थर ''कब्र से हटा हुआ'' था (आयत 1ख)। सुसमाचार के विवरणों में अन्य स्त्रियों का भी साथ है, जो उसके साथ गई थीं पर यूहन्ना में मरियम का ही नाम दिया गया है। बाद में पतरस और यूहन्ना कब्र में झांकने पर देखा कि वहां केवल यीशु के कपड़े थे, जैसे उन्हें उतारकर एक और रखा गया था। स्पष्टतया यह कब्र को लूटे जाने का मामला नहीं था!

यह महत्वपूर्ण है कि मरियम खाली कब्र और जी उठने यीशु दोनों की पहली गवाह बनी। यह पक्का संकेत है कि यह कहानी आरम्भिक मसीही लोगों द्वारा यीशु को इसी प्रकार के यीशु का मिथ्य बनाने के लिए नहीं घड़ी गई थी, जैसा कि कुछ विद्वानों का मानना है। पहली सदी में कोई ऐसी कहानी बनाकर स्त्रियों को प्रमुख गवाहों की स्थिति में कोई न लाता, क्योंकि स्त्रियों की गवाही अविश्वसनीय मानी जानी थी। यह सुसमाचार के चारों वृत्तांतों की ऐतिहासिक विश्वसनीयता का मज़बूत तर्क है, क्योंकि चारों स्त्रियां पहली गवाह बनीं।

इसके बाद जी उठने के बाद के दर्शनों की शृंखला मिलती है। यूहन्ना 20:11-18 में यीशु मरियम को दिखाई दिया, जिसने उसे देखकर समझा कि वह माली है। फिर वह प्रेरितों में से दस को दिखाई दिया (यहूदा को निकालकर, जो उन में से निकल गया था, और थोमा को जो किसी कारण वहां उपस्थित नहीं था; आयतें 19, 20)। अन्य दस की बात सुनने के बाद थोमा ने संदेह जताया और कहा कि वह तब तक विश्वास नहीं करेगा जब तक वह अपनी आंखों से न देख ले कि यीशु जी उठा है। आठ दिन बाद यीशु ने उसे वह अवसर दे दिया जिस पर वह पुकार उठा, ''हे मेरे प्रभु, हे मेरे परमेश्वर!'' (आयत 28)।

सुसमाचार के विवरण जी उठने के बाद के कई दर्शनों के बारे में बताते हैं,[3] जो प्रेरितों 1:3 कहता है कि चालीस दिन के दौरान हुए। सुसमाचार पर कोई भी विवरण हर दर्शन को लिखने का दावा नहीं करता, पर हर लेखक ने उन्हीं दर्शनों को चुना जो उसके अपने उद्देश्य से मेल खाते लगते हैं। 1 कुरिन्थियों 15:5-8 में पौलुस ने कुछ दर्शनों का उल्लेख किया जिनमें सबसे प्रसिद्ध याकूब (यीशु के भाई) और एक और दर्शन ''एक ही समय में पांच सौ से अधिक भाइयों'' को, सुसमाचार के विवरणों में इनका कोई उल्लेख नहीं है।

इन दर्शनों का क्या काम था और वे यीशु की कहानी में इतने महत्वपूर्ण क्यों हैं? पहली बात तो यह कि बेशक उनसे यीशु के अनुयायियों में इस बात की पुष्टि हुई कि वह सचमुच में जीवित है, जिससे वे उसके गवाह बन सके। प्रेरित होने की एक शर्त यह थी कि व्यक्ति यूहन्ना द्वारा यीशु को बपतिस्मा दिए जाने से लेकर उसे स्वर्ग पर उठाए जाने तक, उसकी सेवकाई का चश्मदीद रहा हो (प्रेरितों 1:21, 22)। पौलुस ने अपने प्रेरित होने का बचाव यह कहते हुए किया, ''क्या मैं स्वतंत्र नहीं? क्या मैं प्रेरित नहीं? क्या मैं ने यीशु को जो हमारा प्रभु है, नहीं देखा? ...'' (1 कुरिन्थियों 9:1)। बहुत सम्भावना है कि प्रेरितों के काम में दमिश्क के मार्ग पर शाऊल/पौलुस को यीशु का दर्शन (एक नहीं बल्कि तीन बार; प्रेरितों 9; 22; 26) इसी कारण दिया गया। पौलुस मूल बारह चेलों में से एक नहीं था जिस कारण इस बात को साबित किया जाना आवश्यक था कि वास्तव में उसे प्रेरित के रूप में स्वयं प्रभु द्वारा चुना गया था, जिसका अर्थ यह था कि उसके जी उठने प्रभु को उसके लिए देखा होना आवश्यक था। इसलिए जी उठने के दर्शनों का सुसमाचार को फैलाने में महत्वपूर्ण स्थान था।

दूसरा इन दर्शनों से परमेश्वर के पुत्र के रूप में उसके परिचय की पुष्टि करने में सहायता मिलती है। यदि उसकी देह कब्र में रहती तो वह छलिये के रूप में सामने आता और मसीहियत एक फरेब ठहरती। कई अकल्पित धार्मिक लहरों की तरह यह भी आत्मिक अस्तित्वहीनता की गुमनामी में चली जाती है। जब यीशु सचमुच में से कब्र में से बाहर आ गया जैसा कि दर्शनों से पुष्टि होती है, तो तस्वीर बिल्कुल अलग थी। रोमियों 1:4 में पौलुस ने यह कहते हुए कि यीशु ''पवित्रता की आत्मा के भाव से मरे हुओं में से जी उठने के कारण सामर्थ के साथ परमेश्वर का पुत्र ठहरा।'' अनुवादित शब्द ''ठहरा'' का अर्थ ''युक्ति'' या ''घोषणा'' दोनों हो सकता था। पौलुस यह नहीं कह रहा था कि यीशु केवल मरे हुओं में से जी उठने के बाद परमेश्वर का पुत्र बना बल्कि वह अपने जी उठने के गूढ़ के द्वारा परमेश्वर का पुत्र ''घोषित'' हुआ या ''दिखाया गया।''

मसीही लोग किसी शहीद की याद की आराधना नहीं करते बल्कि वे तो क्रूस पर चढ़ाए और जी उठने प्रभु यानी उसकी आराधना करते हैं, जो इस समय हमारी ओर से स्वर्ग में पिता के सामने सिफारिश कर रहा है। हमारा प्रभु वह है जो अपने पवित्र आत्मा में हमारे साथ भी होता है। यह वह व्यक्ति है जिसके साथ प्रभु भोज में ''सहभागिता'' करने का हमें सौभाग्य मिलता है। यह भोज कालांतर में किए गए किसी काम को याद करना ही नहीं (चाहे यह याद करना है); बल्कि इससे भी बढ़कर यह जी उठने मसीह और उसके चेलों के बीच सजीव सहभागिता। यीशु मरा नहीं रहा। इसी कारण हमें जीवित आशा और अपने प्रभु के साथ वर्तमान संगति मिली है।

''कि तुम विश्वास करो''

यूहन्ना 20 अध्याय की अन्तिम दो आयतों में उसके सुसमाचार का विवरण लिखने का यूहन्ना का ''उद्देश्य कथन'' है। उसने यह मानते हुए आरम्भ किया कि उसने उससे कहीं बढ़कर देखा है जो वह एक पुस्तक में समाने के लिए स्थान की कमी के कारण नहीं लिख रहा था (ऐसे ही एक कथन के लिए देखें 21:25)। जो कुछ उसे मालूम था उस सब को बताने के बजाय यूहन्ना अविश्वासी में विश्वास पैदा करने और विश्वासी के विश्वास को मज़बूत करने के लिए यीशु की सेवकाई से उन चुनिन्दा ''चिह्नों'' को बड़े ध्यान से जोड़ता है। यूहन्ना की दिलचस्पी केवल यीशु की जानकारी देना ही नहीं थी बल्कि उसकी मंशा हमें यीशु में परिवर्तित करने/या यीशु में हमोर विश्वास को मज़बूत करने के लिए।[4] उसके लिखने का अन्तिम लक्ष्य था ''कि तुम विश्वास करो, और उसके नाम से जीवन पाओ'' (आयत 31)। इस कहानी को जानना हमारे विश्वास के लिए बड़ा निर्णायक है। विश्वास जीवन पाने के लिए निर्णायक है।

सारांश

क्रूस पर यीशु के दुखों पर ध्यान लगाए रहने के बजाय, यूहन्ना ने हमारा ध्यान उससे भी महत्वपूर्ण तथ्यों की ओर खींचा। यीशु यहूदियों के राजा और जगत के उद्धारकर्त्ता के रूप में मरा; वह हम सब को हमारे पापों से बचाने के लिए मरा; और अपना परिचय दिखाने के लिए और हमें एक ''जीवित आशा'' देने के लिए कब्र से जी उठा ताकि हम भी उसके जी उठने में उसके सहभागी हो सकें।

टिप्पणियां

[1]यूसब्युस *इक्लेसिटेस्टिकल हिस्ट्री* 4.15.4. [2]देखें यूहन्ना 19:20 ''इब्रानी'' यहां सम्भवतया उस भाषा के अरामी रूप को कहा गया है जो फलस्तीन के यहूदियों द्वारा आम इस्तेमाल में लाई जाती थी। लातीनी रोमी साम्राज्य आधिकारिक भाषा थी। यूनानी वह भाषा थी जिसे लगभग चार सौ साल पहले सिकन्दर महान की विजयों के कारण पूरे भूमध्य क्षेत्र में प्रसिद्ध थी। [3]यदि मरकुस 16:9-20 को सुसमाचार के गैर मूल माना जाए तो मरकुस एक अपवाद है। विभिन्न अनुवादों में नोट्स बताया गया है कि वचन का यह भाग प्रारम्भिक हस्तलिपियों में नहीं मिलता। [4]चाहे स्पष्टतया यह मत्ती, मरकुस और लूका के लिए भी सच है, यूहन्ना ही है जिसने सबसे स्पष्ट रूप में अपना उद्देश्य बताया और वही है जिसने पाठक से सीधे अर्थात मध्यम पुरुष (''तुम'') में बात की। वह पाठक को बताना चाहता था कि यह कहानी आम तौर पर नहीं बताई जा रही थी बल्कि हर व्यक्ति के लिए इसका विवरण पढ़ने के लिए दी गई थी।